

ऊँचे सिंहासन बैठि वसु नृप, धरम का भूपति भया ।
वच झूठ सेती नरक पहुँचा, सुरग में नारद गया ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमसत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

काय छहों प्रतिपाल, पंचेन्द्रिय मन वश करो ।

संजम-रतन सँभाल, विषय-चोर बहु फिरत हैं ॥

उत्तम संजम गहु मन मेरे, भव-भव के भाजैं अघ तेरे ।

सुरग-नरक-पशुगति में नाहीं, आलस-हरन करन सुख ठाँ हीं ॥

ठांही पृथ्वी जल आग मारुत, रूख त्रस करुना धरो ।

सपरसन रसना घ्रान नैना, कान मन सब वश करो ॥

जिस बिना नहिं जिनराज सीझे, तू रूख्यो जग-कीच में ।

इक घरी मत विसरो करो नित, आयु जम-मुख बीच में ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमसंयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तप चाहैं सुरराय, करम-शिखर को वज्र है ।

द्वादशविधि सुखदाय, क्यों न करै निज सकतिसम ॥

उत्तम तप सब माहिं बखाना, करम-शैल को वज्र-समाना ।

बस्यो अनादि निगोद मँझारा, भू विकलत्रय पशु तन धारा ॥

धारा मनुष तन महादुर्लभ, सुकुल आयु निरोगता ।

श्रीजैनवानी तत्त्वज्ञानी, भई विषय-पयोगता ॥

अति महा दुरलभ त्याग विषय-कषाय जो तप आदरैं ।

नर-भव अनूपम कनक घर पर, मणिमयी कलसा धरैं ॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमतपोधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दान चार परकार, चार संघ को दीजिए ।

धन बिजुली उनहार, नर-भव लाहो लीजिए ॥

उत्तम त्याग कह्यो जग सारा, औषध शास्त्र अभय आहारा ।

निहचै राग-द्वेष निरवारै, ज्ञाता दोनों दान सँभारै ॥

दोनों सँभारै कूप-जल सम, दरब घर में परिनया ।

निज हाथ दीजे साथ लीजे, खाय खोया बह गया ॥